2 बचपन

मैं तुम्हें अपने बचपन की ओर ले जाऊँगी।

मैं तुमसे कुछ इतनी बड़ी हूँ कि तुम्हारी दादी भी हो सकती हूँ, तुम्हारी नानी भी। बड़ी बुआ भी–बड़ी मौसी भी। परिवार में मुझे सभी लोग जीजी कहकर ही पुकारते हैं।

हाँ, मैं इन दिनों कुछ बड़ा-बड़ा यानी उम्र में सयाना महसूस करने लगी हूँ। शायद इसलिए कि पिछली शताब्दी में पैदा हुई थी। मेरे पहनने-ओढ़ने में भी काफ़ी बदलाव आए हैं। पहले मैं रंग-बिरंगे कपड़े पहनती रही हूँ। नीला-जामुनी-ग्रे-काला-चॉकलेटी। अब मन कुछ ऐसा करता है कि सफ़ेद पहनो। गहरे नहीं, हलके रंग। मैंने पिछले दशकों में तरह-तरह की पोशाकें पहनी हैं। पहले फ्रॉक, फिर निकर-वॉकर, स्कर्ट, लहँगे, गरारे और अब चूड़ीदार और घेरदार कुर्ते।

बचपन के कुछ फ्रॉक तो मुझे अब तक याद हैं।

हलकी नीली और पीली धारीवाला फ्रॉक। गोल कॉलर और बाज़ू पर भी गोल कफ़।

एक हलके गुलाबी रंग का बारीक चुन्नटोंवाला घेरदार फ्रॉक। नीचे गुलाबी रंग की फ्रिल।

उन दिनों फ्रॉक के ऊपर की जेब में रूमाल और बालों में इतराते रंग-बिरंगे रिबन का चलन था।

लेमन कलर का बड़े प्लेटोंवाला गर्म फ्रॉक जिसके नीचे फ़र टँकी थी।

दो ट्यूनिक भी याद हैं। एक चॉकलेट रंग का और अंदर की कोटी प्याज़ी। दूसरा ग्रे और उसके साथ सफ़ेद कोटी।

मुझे अपने मोज़े और स्टॉकिंग भी याद हैं!

बचपन में हमें अपने मोज़े खुद धोने पड़ते थे। वह नौकर या नौकरानी को नहीं दिए जा सकते थे। इसकी सख्त मनाही थी।

हम बच्चे इतवार की सुबह इसी में लगाते। धो लेने के बाद अपने-अपने जूते पॉलिश करके चमकाते। जब जूते कपड़े या ब्रश से रगड़ते तो पॉलिश की चमक उभरने लगती।

सरवर, मुझे आज भी बूट पॉलिश करना अच्छा लगता है। हालाँकि अब नयी-नयी किस्म के शू आ चुके हैं। कहना होगा कि ये पहले से कहीं ज़्यादा आरामदेह हैं। हमें जब नए जूते मिलते, उसके साथ ही छालों का इलाज शुरू हो जाता।

जब कभी लंबी सैर पर निकलते, अपने पास रुई ज़रूर रखते। जूता लगा तो रुई मोज़े के अंदर। हाँ, हमारे-तुम्हारे बचपन में तो बहुत फ़र्क हो चुका है।

हर शनीचर को हमें ऑलिव ऑयल या कैस्टर ऑयल पीना पड़ता। यह एक मुश्किल काम था। शनीचर को सुबह से ही नाक में इसकी गंध आने लगती!

छोटे शीशे के गिलास, जिन पर ठीक खुराक के लिए निशान पड़े रहते, उन्हें देखते ही मितली होने लगती।

मुझे आज भी लगता है कि अगर हम न भी पीते वह शनिवारी दवा तो कुछ ज़्यादा बिगड़ने वाला नहीं था। सेहत ठीक ही रहती।

तुम्हें बताऊँगी कि हमारे समय और तुम्हारे समय में कितनी दूरी हो चुकी है। यहाँ तक कि बचपन की दिलचस्पियाँ भी बदल गई हैं।

याद रहे, उन दिनों कुछ घरों में ग्रामोफ़ोन थे, रेडियो और टेलीविजन नहीं थे।

हमारे बचपन की कुलफ़ी आइसक्रीम हो गई है। कचौड़ी-समोसा, पैटीज़ में बदल गया है। शहतूत और फ़ाल्से और खसखस के शरबत कोक-पेप्सी में।

उन दिनों कोक नहीं, लेमनेड, विमटो मिलती थी।

शिमला और नयी दिल्ली में बड़े हुए बच्चों को वेंगर्स और डेविको रेस्तराँ की चॉकलेट और पेस्ट्री मज़ा देनेवाली होती। हम भाई-बहनों की ड्यूटी लगती शिमला माल से ब्राउन ब्रेड लाने की।

हमारा घर माल से ज़्यादा दूर नहीं था। एक छोटी-सी चढ़ाई और गिरजा मैदान पहुँच जाते। वहाँ से एक उतराई उतरते और माल पर। कन्फ़ेक्शनरी काउंटर पर तरह-तरह की पेस्ट्री और चॉकलेट की खुशबू मनभावनी!

हमें हफ़्ते में एक बार चॉकलेट खरीदने की छूट थी। सबसे ज़्यादा मेरे पास ही चॉकलेट-टॉफ़ी का स्टॉक रहता। मैं चॉकलेट लेकर खड़े-खड़े कभी न खाती। घर लौटकर साइडबोर्ड पर रख देती और रात के खाने के बाद बिस्तर में लेटकर मज़ा ले-ले खाती।

शिमला के काफ़ल भी बहुत याद आते हैं। खट्टे-मीठे। कुछ एकदम लाल, कुछ गुलाबी। रसभरी। कसमल। सोचकर ही मुँह में पानी भर आए। चेस्टनट एक और गज़ब की चीज़। आग पर भूने जाते और फिर छिलके उतारकर मुँह में।

चने ज़ोर गरम और अनारदाने का चूर्ण! हाँ, चने ज़ोर गरम की पुड़िया जो तब थी, वह अब भी नज़र आती है। पुराने कागज़ों से बनाई हुई इस पुड़िया में निरा हाथ का कमाल है। नीचे से तिरछी लपेटते हुए ऊपर से इतनी चौड़ी कि चने आसानी से हथेली पर पहुँच जाएँ। एक वक्त था जब फ़िल्म का गाना—चना ज़ोर गरम बाबू मैं लाया मज़ेदार, चना ज़ोर गरम—उन दिनों स्कूल के हर बच्चे को आता था।

कुछ बच्चे पुड़िया पर तेज़ मसाला बुरकवाते। पूरा गिरजा मैदान घूमने तक यह पुड़िया चलती। एक-एक चना-पापड़ी मुँह में डालने और कदम उठाने में एक खास ही लय-रफ़्तार थी।

छुटपन में हमने शिमला रिज पर बहुत मज़े किए हैं। घोड़ों की सवारी की है। शिमला के हर बच्चे को कभी-न-कभी यह मौका मिल ही जाता था।

हम जाने क्यों घोड़ों को कुछ कमतर करके समझते। उन पर हँसते थे। ननिहाल के घोड़े खूब हृष्ट-पुष्ट और खूबसूरत। उनकी बात फिर कभी।

शाम को रंग-बिरंगे गुब्बारे। सामने जाखू का पहाड़। ऊँचा चर्च। चर्च की घंटियाँ बजतीं तो दूर-दूर तक उनकी गूँज फैल जाती। लगता, इसके संगीत से प्रभु ईशू स्वयं कुछ कह रहे हैं।

सामने आकाश पर सूर्यास्त हो रहा है। गुलाबी सुनहरी धारियाँ नीले आसमान पर फैल रही हैं। दूर-दूर फैले पहाड़ों के मुखड़े गहराने लगे और देखते-देखते बत्तियाँ टिमटिमाने लगीं। रिज पर की रौनक और माल की दुकानों की चमक के भी क्या कहने! स्कैंडल पॉइंट की भीड़ से उभरता कोलाहल।

सरवर, स्कैंडल पॉइंट के ठीक सामने उन दिनों एक दुकान हुआ करती थी, जिसके शोरूम में शिमला-कालका ट्रेन का मॉडल बना हुआ था। इसकी पटरियाँ—उस पर खड़ी छोटे-छोटे डिब्बों वाली ट्रेन। एक ओर लाल टीन की छतवाला स्टेशन और सामने सिग्नल देता खंबा—थोड़ी-थोड़ी दूर पर बनीं सुरंगें!

पिछली सदी में तेज़ रफ़्तारवाली गाड़ी वही थी। कभी-कभी हवाई जहाज़ भी देखने को मिलते! दिल्ली में जब भी उनकी आवाज़ आती, बच्चे उन्हें देखने बाहर दौड़ते। दीखता एक भारी-भरकम पक्षी उड़ा जा रहा है पंख फैलाकर। यह देखो और वह गायब! उसकी स्पीड ही इतनी तेज़ लगती। हाँ, गाड़ी के मॉडलवाली दुकान के साथ एक और ऐसी दुकान थी जो मुझे कभी नहीं भूलती। यह वह दुकान थी जहाँ मेरा पहला चश्मा बना था। वहाँ आँखों के डॉक्टर अंग्रेज़ थे।

शुरू-शुरू में चश्मा लगाना बड़ा अटपटा लगा। छोटे-बड़े मेरे चेहरे की ओर देखते और कहते—आँखों में कुछ तकलीफ़ है! इस उम्र में ऐनक! दूध पिया करो। मैं डॉक्टर साहिब का कहा दोहरा देती—कुछ देर पहनोगी तो ऐनक उतर जाएगी।

वैसे डॉक्टर साहिब ने पूरा आश्वासन दिया था, लेकिन चश्मा तो अब तक नहीं उतरा। नंबर बस कम ही होता रहा! मैं अपने-आप इसकी ज़िम्मेवार हूँ। जब आप दिन की रोशनी को छोड़कर रात में टेबल लैंप के सामने काम करेंगी—तो इसके अलावा और क्या होगा! हाँ, जब पहली बार मैंने चश्मा लगाया तो मेरे एक चचेरे भाई ने मुझे छेड़ा—देखो, देखो, कैसी लग रही है!

आँख पर चश्मा लगाया
ताकि सूझे दूर की
यह नहीं लड़की को मालूम
सूरत बनी लंगूर की!

मैं खीझी कि मुझ पर यह क्यों दोहराया जा रहा है! पर शेर बुरा न लगा।

जब वह चाय पीकर चले गए तो मैं अपने कमरे में जाकर आईने के सामने खड़ी हो गई। कई बार अपने को देखा। ऐनक उतारी। फिर पहनी। फिर उतारी। देखती रही–देखती रही।

सूरत बनी लंगूर की–
नहीं-नहीं-नहीं–
हाँ-हाँ-हाँ–

मैंने अपने छोटे भाई का टोपा उठाकर सिर पर रखा। कुछ अजीब लगा।

अच्छा भी और मज़ाकिया भी।

तब की बात थी, अब तो चेहरे के साथ घुल-मिल गया है चश्मा। जब कभी उतरा हुआ होता है तो चेहरा खाली-खाली लगने लगता है।

याद आ गया वह टोपा, काली फ्रेम का चश्मा और लंगूर की सूरत! हाँ, इन दिनों शिमला में मैं सिर पर टोपी लगाना पसंद करती हूँ। मैंने कई रंगों की जमा कर ली हैं। कहाँ दुपट्टों का ओढ़ना और कहाँ सहज सहल सुभीते वाली हिमाचली टोपियाँ!

❑ *कृष्णा सोबती*

संस्मरण से

1. लेखिका बचपन में इतवार की सुबह क्या-क्या काम करती थीं?
2. 'तुम्हें बताऊँगी कि हमारे समय और तुम्हारे समय में कितनी दूरी हो चुकी है।'– इस बात के लिए लेखिका क्या-क्या उदाहरण देती हैं?
3. पाठ से पता करके लिखो कि लेखिका को चश्मा क्यों लगाना पड़ा? चश्मा लगाने पर उनके चचेरे भाई उन्हें क्या कहकर चिढ़ाते थे?
4. लेखिका अपने बचपन में कौन-कौन-सी चीज़ें मज़ा ले-लेकर खाती थीं? उनमें से प्रमुख फलों के नाम लिखो।

संस्मरण से आगे

1. लेखिका के बचपन में हवाई जहाज़ की आवाज़ें, घुड़सवारी, ग्रामोफ़ोन और शोरूम में शिमला-कालका ट्रेन का मॉडल ही आश्चर्यजनक आधुनिक चीज़ें थीं। आज क्या-क्या आश्चर्यजनक आधुनिक चीज़ें तुम्हें आकर्षित करती हैं? उनके नाम लिखो।
2. अपने बचपन की कोई मनमोहक घटना याद करके विस्तार से लिखो।

अनुमान और कल्पना

1. सन् 1935-40 के लगभग लेखिका का बचपन शिमला में अधिक दिन गुज़रा। उन दिनों के शिमला के विषय में जानने का प्रयास करो।
2. लेखिका ने इस संस्मरण में सरवर के माध्यम से अपनी बात बताने की कोशिश की है, लेकिन सरवर का कोई परिचय नहीं दिया है। अनुमान लगाओ कि सरवर कौन हो सकता है?

भाषा की बात

1. क्रियाओं से भी भाववाचक संज्ञाएँ बनती हैं। जैसे मारना से **मार**, काटना से **काट**, हारना से **हार**, सीखना से **सीख**, पलटना से **पलट** और हड़पना से **हड़प** आदि भाववाचक संज्ञाएँ बनी हैं। तुम भी इस संस्मरण से कुछ क्रियाओं को छाँटकर लिखो और उनसे भाववाचक संज्ञा बनाओ।

2. **चार** दिन, **कुछ** व्यक्ति, **एक लीटर** दूध आदि शब्दों के प्रयोग पर ध्यान दो तो पता चलेगा कि इसमें **चार**, **कुछ** और **एक लीटर** शब्द से संख्या या परिमाण का आभास होता है, क्योंकि ये संख्यावाचक विशेषण हैं। इसमें भी **चार** दिन से निश्चित संख्या का बोध होता है, इसलिए इसको निश्चित संख्यावाचक विशेषण कहते हैं और **कुछ** व्यक्ति से अनिश्चित संख्या का बोध होने से इसे अनिश्चित संख्यावाचक विशेषण कहते हैं। इसी प्रकार **एक लीटर** दूध से परिमाण का बोध होता है इसलिए इसे परिमाणवाचक विशेषण कहते हैं।

- अब तुम नीचे लिखे वाक्यों को पढ़ो और उनके सामने विशेषण के भेदों को लिखो–

  (क) मुझे दो दर्जन केले चाहिए।

  (ख) दो किलो अनाज दे दो।

  (ग) कुछ बच्चे आ रहे हैं।

  (घ) सभी लोग हँस रहे थे।

  (ङ) तुम्हारा नाम बहुत सुंदर है।

3. कपड़ों में <u>मेरी</u> दिलचस्पियाँ <u>मेरी</u> मौसी जानती थीं।

- इस वाक्य में रेखांकित शब्द 'दिलचस्पियाँ' और 'मौसी' संज्ञाओं की विशेषता बता रहे हैं, इसलिए ये सार्वनामिक विशेषण हैं। सर्वनाम कभी-कभी विशेषण का काम भी करते हैं। पाठ में से ऐसे पाँच उदाहरण छाँटकर लिखो।

कुछ करने को

1. अगर तुम्हें अपनी पोशाक बनाने को कहा जाए तो कैसी पोशाक बनाओगे और पोशाक बनाते समय किन बातों का ध्यान रखोगे? अपनी कल्पना से पोशाक का डिज़ाइन बनाओ।
2. तीन-तीन के समूह में अपने साथियों के साथ कपड़ों के नमूने इकट्ठा करके कक्षा में बताओ। इन नमूनों को छूकर देखो और अंतर महसूस करो। यह भी पता करो कि कौन-सा कपड़ा किस मौसम में पहनने के लिए अनुकूल है।
3. हथकरघा और मिल के कपड़े बनाने के तरीकों के बारे में पता करो। संभव हो तो किसी कपड़े के कारखाने में जाकर भी जानकारी इकट्ठी करो।
4. हमारे देश में तरह-तरह के भोजन, तरह-तरह की पोशाकें प्रचलित हैं। कक्षा के बच्चे और शिक्षक इनके विविध रूपों के बारे में बातचीत करें।